अशोक जेरथ की लंदन प्रवास की तीन कविताएं

1

आधी रात को उफनते सागर पर तुम्हारी किश्ती तनिक रुक गई है
तृष्णा और वासना की चाहत तुम्हें मजबूर कर रही है
ताकि तुम आत्मा की आवाज़ पर चलते हुए विचलित हो जाओ।
उफनते हुए सागर के किनारे बिखरी हुई चट्टानों पर
अन्धेरे को खोजता आकाशदीप की तरह वह खड़ा
आज भी रोशनी को दोनों हाथों में लेकर बिखरा रहा है
दूर तारे की तरह चमकता, अन्धेरे को पीता हुआ
हम में जो कुछ लरज रहा था
वह अब गुम हो गया है
न ही मेरी पकड़ इतनी मजबूत थी
न ही तुम्हारी पहुंच इतनी गहरी थी
कि हम लगातार चल सकते
जिसको तुमने अभी पकड़ा हुआ है
वह एक धुंधवाता हुआ टुकड़ा है
जो कभी भी डूब सकता है।

2

उड़ारी भरते पाखी नीचे आकर
वृक्षों की जड़ों में गुम हो जाते हैं
काई से भरी जमीन से एक आवाज़ उभरती है जो मर चुकी है
घण्टाघर ने नौ बजाए हैं
और एक आवाज़ बिखर कर चारों ओर
संड़ाद के रूप में अपना वजूद फैला देती है
हवा में मरी हुई आत्मा की बदबू फैल जाती है।
मुझे पीले पत्तों के झड़ने के दिन स्मरण हो आते हैं
जब तेरी आंखें खुली रह गई थीं
और मेरा दायां हाथ
तुम्हारी बाईं छाती को सहलाता रहा था।
पर अब न ही पत्तों के झड़ने का अहसास है
न ही किसी आवाज़ की कशिश
सागर का मैला पानी चलता रहता है
जिस पर टूटी हुई पुरानी किश्ती
डगमगाती रहती है

3

गोदी पर खड़े जहाज पर
पता नहीं कितने सूराख हो गए हैं
जिनके बीच में से होकर नमकीन पानी
अंदर जा रहा है
सागर के किनारे खड़े आकाशदीप की तरह
वह रौशनी बिखेरता
शिद्दत से देखता रहता है।
गोदी से बाहर खिसकता वह जहाज
सागर में डूबता हुआ उल्ट जाता है
मात्र उसका नाम पट्ट '.....ष्णु प्रिया'
नाम के साथ चमक उठता है
एक हलकाया हुआ पागल कुत्ता,
अपनी पुश्तैनी आदत से मजबूर
आकाशदीप की नींव पर
जांघ उठाकर मूतते हुए भौंकता है
मानो आकाशदीप के अस्तित्व को मिटा देना चाहता हो।

विवेक शर्मा की कविता

मैं निवालों पर निबंध हूं

मैं निवालों पर निबंध हूं
प्रेयसी मेरी भूख रही है
अटल रही है, अटूट रही है
इस उदर की ज्वाला से ही
झुलसी नीयत स्पष्ट रही है

हर सांस को कर्म से, कठिनाई से
पाया है मैंने
हर नींद में स्वप्नहीन विराम
पाया है मैंने

मैं ही पथिक, मैं ही पथहीन
मैं ही पथ बनाता भी हूं
इन कारखानों, करघों को पूजता
मैं ही इन्हें चलाता भी हूं
धूल से धुला मैं ही
धूल में मिला मैं ही
गर्द से गुल बनता और बनाता मैं हूं

मैं ही घाटों पर पीटता वस्त्र
मैं ही वस्त्र-हीन
मैं ही फुटपाथों पर लेटता
बिस्तरों को सजाता मैं ही
मैली चादरों को ओढ़कर
तन को छुपाता मैं ही

मैं ही तो खेतों में बीज-सा धंसता
पसीने का सावन उढ़ेलता
और मेघों का प्यासा मैं ही

और मेरी पूँजी, बस पाँच उंगलियाँ
एक पेट, थोड़ी नींद, कुछ किस्से
और एक ज़िंदगी
जो रोज नई चुनौती है